''खुदाई''

देवेन्द्र कुमार मिश्रा

मई बीता, जून बीता, आधा जुलाई बीत गया। तालाब बहुत गहरा तो नहीं लेकिन फिर भी बन चुका था। जुलाई भी सूखा गया। लेकिन साधु ने अपना कर्म जारी रखा। अब अच्छी खासी खुदाई हो चुकी थी। खुदाई करना उसका काम था। पानी गिराना खुदा का काम था। वह अपना काम कर चुका था। अगस्त लग चुका था। खुदा ने भी अपना काम कर दिया। आसमान में घनघोर घटायें छा गई, बादलों ने बरसना शुरू कर दिया। 24 घंटे लगातार मूसलाधार बारिश हुई। तालाब लबालब भर चुका था। ग्रामीण शहर से वापिस गांव की ओर आना प्रारंभ हो गये। उन्होंने पानी से भरे तालाब का नाम साधु तालाब रख दिया। ग्रामीणों का पलायन बंद हो गया।

और एक दिन उसके सब्र का बांध टूट गया। आखिर कब तक सहता। पढ़ाई खत्म होने के बाद वर्षों की बेकारी से माँ के तीखे वचनों से मन आहत होता। पिता जो नसीहतें देते उसमें भी उसकी असफलता के ताने ही होते। वह समझ चुका था कि संसार में सफल आदमी को ही सम्मान मिलता है। डूबते सूरज को कौन नमस्कार करता है।

इस डूबते सूरज के पास एक गरीब कम उम्र की लड़की का रिश्ता आया। वह तैयार न था। लेकिन संयुक्त रूप से माता-पिता की यही सलाह थी, समझाइश थी, चेतावनी थी। ये तो तुम्हारी किस्मत अच्छी है कि लड़की वाले अति दरिद्र हैं। अन्यथा एक बेकार व्यक्ति को कौन अपनी लड़की देता है। लड़की वालों के पास देने को दहेज होता तो इस घर में रिश्ता लेकर आते। जिसका लड़का बेरोजगार है। जिसकी नौकरी के साथ-साथ विवाह की उम्र भी निकल चुकी है।

जबकि उसका कहना था कि उम्र का इतना अंतराल बाद में घातक हो सकता है। फिर ऐसा रिश्ता करना किसी की मजबूरी का फायदा उठाना हुआ। प्राइवेट जॉब करके वह कुछ कमा लेता था लेकिन अर्द्धबेरोजगारी जैसी स्थिति थी। लेकिन परिवार के दबाव के आगे झुकना पड़ा। बड़ा भाई सम्पन्न था। वह अपनी पत्नी को लेकर अलग हो गया। भाई और भाभी की संयुक्त सोच यही थी हम सम्पन्न हैं। ऊँची नौकरी में हैं दोनों इन दरिद्रों के मध्य अपना ज़ीवन क्यों बर्बाद करें। हमें अपने सुखमय वैवाहिक जीवन के लिए अलग रहना होगा और वे अलग हो गये। पिता को थोड़ी सी पेंशन मिलती थी। गरीबी, अभाव में होते कलह से वह कमजोर पड़ रहा था। दिन-प्रतिदिन ऐसे में ही वह एक दिन उसकी आँखों ने वो बेशर्म दृश्य भी देख लिया जो उसे नहीं देखना चाहिए था। पत्नी ने माफी, शर्मिन्दगी की बजाय पलटकर उत्तर दिया। अपने से 22 वर्ष छोटी लड़की से विवाह का अन्जाम तो यही होना था। वह टूट चुका था। रिश्ते-नातों पर से उसका विश्वास उठ चुका था। अगर आप देने में सक्षम हैं तो सब आपके हैं। यदि आप अक्षम हैं तो आपका कोई नहीं है। उसका सगा

बड़ा भाई यदि रास्ते में मिल जाता तो मुँह घुमाकर निकल जाता इस डर से कि कहीं कुछ मांगने न लगे।

''42 वर्ष की उम्र में अपनी दुर्बल काया को लेकर संसार से टूटा हुआ वह एक दिन पलायन कर गया। इस तरह के हताश व्यक्तियों के लिए धर्म ही एक मात्र विकल्प बचता है। जबकि वह जानता था कि ईश्वर प्रेम से मिलता है। टूटे मन, निराशा और पलायन से नहीं। लेकिन कोई और चारा न था उसके पास। वह संसार की मार से अधमरा धर्म की शरण में गया। पहले वह उन विख्यात आश्रमों में गया जंहा ज्ञान, ध्यान की कक्षाओं के कोर्स करवाये जाते थे भारी फीस लेकर। ऐसा लगता था ये ध्यान धर्म के केन्द्र नहीं बल्कि कोचिंग सेन्टर हों। बाजारवाद से ग्रस्त आश्रमों से अन्य आश्रमों में गया तो वहां पर भोग विलास का खेल जारी देखकर उसे लगा कि ये लोग सन्यास को, धर्म को क्यों बदनाम करते हैं। इससे अच्छा तो था कि ये विवाह कर लेते।

वह हिन्दू धर्म के गरीब संतों से मिला तो उसे समझ में आया कि आधे से अधिक तो उसी की तरह संसार से भागे हुए हैं। दुखी और निराश अपनों के घात से पीड़ित शांत पानी की तरह उदास जैसे। कुछ ऐसे थे जिन्हें बनना ही साधु था। वे इसी साधुगिरी में मस्त थे। लेकिन उनका एक ही कहना था। विश्वास रखो। धर्म में संदेह के लिए कोई स्थान नहीं। तर्क मत करो। आंखें बन्द करके केवल श्रद्धा रखो। क्या मिला क्या नहीं मिला ये बात मन में मत लाओ। हरि कथा कहो। दक्षिणा लो। गुजारा करो। जब उसे ये बात नहीं जमी तो वह इस्लाम की ओर बढ़ा। भाईचारे वाले धर्म में भाई-भाई का गला काट रहा है। ईसाई धर्म की ओर बढ़ा। तो वहां भी वर्चस्व और श्रेष्ठता की होड़ थी। ध्येय सभी का एक था। पैसा, सुख, सुविधाएं, सम्मान हासिल करना। जो संसार का हाल था वही धर्म की स्थिति थी। सच्चा कोई नहीं। सब बगला भगत। सबकी स्थिति वैसी ही थी जैसे दूषित भोजन से शरीर की और दूषित मन से मन और मस्तिष्क की होती है। वह वहां भी न रुका और

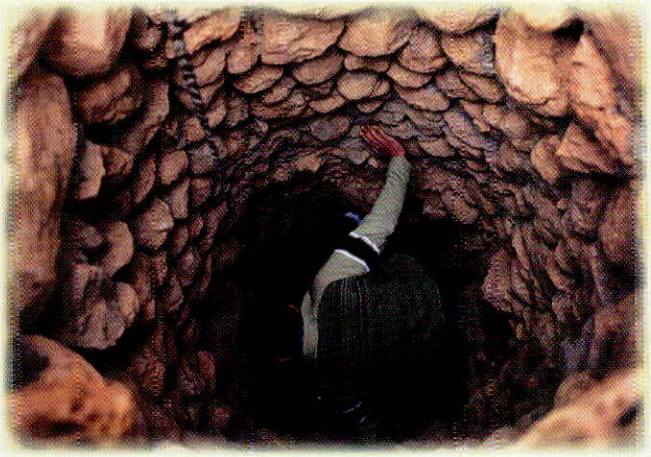

आगे बढ़ता गया, अकेला। मन की शांति, परमात्मा के दर्शन की तलाश में। भटकते-भटकते वह एक गांव में पहुंचा। वह भिक्षा मांगता और एक समय तो भक्तगण अपनी समस्याएं लेकर आये। लेकिन जब उसने स्पष्ट किया कि वह स्वयं अपनी समस्या में है। आप लोगों की समस्यायें हल करना मेरे वश की बात नहीं है। तब भक्तों ने उसे संत नहीं भिखारी समझकर भीख देना शुरू किया। पुराने घाव रह-रहकर उसे दुखी करते। मन उदास हो जाता। चित्त अशांति से भर जाता। उसे अपने जप का कोई फल मिलता नहीं दिखा। उसे संदेह होने लगा कि ईश्वर नाम का कोई है भी या नहीं।

गर्मी आरंभ हो चुकी थी। गांव के लोग पलायन करने लगे थे शहरों की ओर। घरों में सिर्फ बुजुर्ग लोग थे जो चलने फिरने में असमर्थ थे। जब उसने गांव वालों से पूछा कि कहां जा रहे हो और क्यों? तब गांव वालों ने बताया। गर्मी में यहां पानी नहीं रहता। कुंए सूख जाते हैं। हैंडपंप में पानी नहीं आता। ऐसे में प्यासे रहने से अच्छा है कि शहर में जाकर मजदूरी करें। बरसात के आते ही फिर आ जायेंगे। बुजुर्गो के लायक थोड़ा बहुत पानी कुएं में रहता है। गांव वीरान हो गया। लोग अपने परिवार के साथ शहर कूच कर गये। कुएं में सबसे निचले स्तर पर गंदा पानी था। जिसे बुजुर्ग लोग कपड़े के छन्ने से साफ करके पीते थे। जानवर भी दूसरे क्षेत्रों में निकल जाते थे। जो नहीं जा पाते वे प्यास से मर जाते। बुजुर्गो को छोड़ने की वजह ये थी कि घर की देखभाल भी हो जाती। फिर वे शहर की भाग-दौड़ भरी जिन्दगी के योग्य भी नहीं थे। और साधु बने इस व्यक्ति को समझ में आया कि अपने लिए जीना अपने लिए तप करना ये तो संसारी लोग भी करते हैं। जब उसने साधु का चोला पहना है तो उसे परहित में कर्म करना चाहिए। मन ध्येय को निश्चत करके उसने गेंती, फावड़ा, तसला का इन्तजाम किया और खाली जगह पर खुदाई प्रारंभ कर दी। अप्रैल की चिलचिलाती गर्मी में वह दिन भर खुदाई करता। थक जाता तो किसी वृक्ष के नीचे आराम कर लेता। एक समय भिक्षा मांगकर भोजन करता और फिर खुदाई प्रारंभ कर देता। इस खुदाई के काम में वह अकेला था। थकान से वह मंत्र, स्त्रोत सब कुछ भूल कर गहरी नींद में चला जाता और रात मे नींद खुलने पर फिर खुदाई आरंभ कर देता।

गांव के वृद्ध लोगों ने पूछा भी कि ये क्या कर रहे हो ? जब उसने बताया कि तालाब बना रहा हूं। ताकि बरसात में पानी जमा हो सके और गर्मियों में काम आये तो उन्होंने उसे समझाया। ''अकेले संभव नहीं है तालाब निर्माण। फिर ये सरकार का काम है। तुम साधु हो अपने ईष्ट के दर्शन के लिए ध्यान करो।''

उसने कहा-''आप लोग अपनी मेहनत और पसीने की कमाई से भिक्षा देकर मेरे लिए भोजन दे सकते हो तो मैं भी आपके लिए कुछ तो करने का प्रयास कर ही सकता हूं। सच्ची भक्ति

इससे उसके मन को असीम शांति मिली। उसके चित्त में प्रसन्नता छा गई। जबकि वह कोई, मंत्र, पूजा, पाठ नहीं कर रहा था। वह समझ गया था परहित ही सबसे बड़ा धर्म है। वह स्वयं में ईश्वर को पा रहा था। उसके सारे, क्लेश, अशांति समाप्त हो चुकी थी। जब तक वह जिन्दा रहा खुदाई में लगा रहा और खुदा का नूर उस पर बरसता रहा।

परहित ही है और कोई साथ न दे तो अकेले चलना चाहिए। आज नहीं तो कल, कल नहीं तो परसों। कभी न कभी तो तालाब बनेगा और मैं ये करके रहूंगा।''

खुदाई जारी की उसने। उसे दिन-रात मेहनत करते देख गांव के कुछ वृद्धों ने सोचा हमें भी सहयोग करना चाहिए। उन लोगों से जितना बन सका वे मिट्टी को तसले में भरकर फेंकने में उसकी कुछ मदद कर देते। एक दिन एक वृद्ध ग्रामीण ने पूछा- ''साधु महाराज तालाब बन भी गया और पानी न गिरा तो''

उसने उत्तर दिया नहीं गिरा तो अगले साल गिरेगा। उसके अगले साल गिरेगा। जो हमारे हाथ में है वो हम करें। अगर कोई ऊपरवाला है तो कभी न कभी बरसेगा ही। इसके पहले भी तो पानी गिरा है लेकिन जल संरक्षण की व्यवस्था न होने से गांव वाले पलायन करते हैं। यदि पहले से तालाब होता तो पलायन की नौबत नहीं आती।

मई बीता, जून बीता, आधा जुलाई बीत गया। तालाब बहुत गहरा तो नहीं लेकिन फिर भी बन चुका था। जुलाई भी सूखा गया। लेकिन साधु ने अपना कर्म जारी रखा। अब अच्छी खासी खुदाई हो चुकी थी। खुदाई करना उसका काम था। पानी गिराना खुदा का काम था। वह अपना काम कर चुका था। अगस्त लग चुका था। खुदा ने भी अपना काम कर दिया। आसमान में घनघोर घटायें छा गई, बादलों ने बरसना शुरू कर दिया। 24 घंटे लगातार मूसलाधार बारिश हुई। तालाब लबालब भर चुका था। ग्रामीण शहर से वापिस गांव की ओर आना प्रारंभ हो गये। उन्होंने पानी से भरे तालाब का नाम साधु तालाब रख दिया। ग्रामीणों का पलायन बंद हो गया। लेकिन वह साधु पुरूष उस गांव से गायब होकर किसी दूसरे गांव में खुदाई करने लगा था, भीषण गर्मी में। इससे उसके मन को असीम शांति मिली। उसके चित्त में प्रसन्नता छा गई। जबकि वह कोई, मंत्र, पूजा, पाठ नहीं कर रहा था। वह समझ गया था परहित ही सबसे बड़ा धर्म है। वह स्वयं में ईश्वर को पा रहा था। उसके सारे, क्लेश, अशांति समाप्त हो चुकी थी। जब तक वह जिन्दा रहा खुदाई में लगा रहा और खुदा का नूर उस पर बरसता रहा। अपनी पूरी उम्र उसने इसी काम में लगा दी। मृत्यु के बाद भी उसके चेहरे पर आसमानी नूर था। जिन-जिन गांवों में उसने खुदाई अभियान शुरू करके तालाब बनाये । उन-उन गांवों में आज भी लोग उस साधारण पुरूष को असाधारण समझकर उसके नाम का स्मरण करते हैं।

संपर्क करें :
देवेन्द्र कुमार मिश्रा
पाटनी कॉलोनी, भरत नगर,
चन्दनगांव
छिन्दवाड़ा (म.प्र.-480001)
मो.न.-9425405022

पानी की गज़ल

धरती मां, सूरज पिता

आज न वट-पीपल रहे, रही न शीतल छांव ।
शहरों जैसे हो गये, अब तो सारे गांव ।।

पर्वत, हिमनद, वन सघन, समझो इन्हें विशेष ।
पूरी दुनिया को यही, 'माणा' का सन्देश ।।

पेड़ों के रोमांच से, उपजाती है नेह ।
हरी-भरी लगती तभी, धरती मां की देह ।।

शुद्ध हवा-पानी मिले, उजली-निर्मल धूप ।
निखरे सारे विश्व में, तव-जीवन का रूप ।।

हरी-भरी लगती धरा, सचमुच सुखद सुरम्य ।
कण-कण में जीवन-भरा, पावन और प्रणम्य ।।

धरती मां, सूरज पिता, हम इनकी सन्तान ।
कर्त्ता-भर्त्ता सब यही, और यही भगवान ।।

इनसे ही गतिशीलता, इनसे सर्दी-धूप ।
इनसे जीवन को मिले, सुन्दर-मोहक रूप ।।

पर्वत, घाटी, वन, नदी, निर्झर की जलधार ।
धरती मां का ये सभी, करते हैं श्रृंगार ।।

सागर सुन्दर पांवड़ा, अम्बर तना वितान ।
जी-भर इन्हें निहारिये, दोनों ही छविमान ।।

सूरज ने पाती लिखी, पुलकित हुआ दिगन्त ।
धरा-देह झंकृत हुई, कण-कण खिला बसन्त ।।

संपर्क करें :
डॉ. रामनिवास 'मानव', डी. लिट्
''अनुकृति'' 706, सैक्टर-13, हिसार-125005 (हरि.), फोन न.-01662-238720

कटते-कटते वन घटे

अग्नि, जल, वायु और धरा, जीवन के आधार ।
इनके ही संयोग से, निर्मित यह संसार ।।

निश्चित है हर तत्त्व का, धरती पर अनुपात ।
इनसे आदमज़ात फिर, करती क्यों उत्पात ।।

नदियां अब नाला बनीं, सूखे सब तालाब ।
लगती बात अतीत की, जन-जीवन की आब ।।

कटते-कटते वन घटे, खेती बंटाढार,
लील रहा हरियालियां, शहरों का विस्तार ।।

प्रदूषण प्रतिपल बढ़े, भस्मासुर-सा आज ।
जलवायु के साथ सकल, दूषित हुआ समाज ।।

दिन-दिन बढ़ती गाड़ियां, दिन-दिन बढ़ता शोर ।
सुख से जीने के लिए, नहीं ठिकाना-ठौर ।।

धूल-धुआं इतना बढ़ा, रूक-रूक जाती सांस ।
अब तो कथित विकास ही, बना गले की फांस ।।

भौतिकता की दौड़ में, आज सभी हलकान ।
कौन जुटाये फिर भला, जीवन का सामान ।।

ज़ारी ऐसे ही रहा, मानव का उत्पात ।
बाढ़ और भूकम्प के, सहने होंगे घात ।।

सम्मुख खड़ी चुनौतियां, जाग अरे इन्सान ।
वरना सब मिट जायेगा, जग से नाम-निशान ।।